International Journal for Multidisciplinary Research (IJFMR)
E-ISSN: 2582-2160 ● Website: www.ijfmr.com ● Email: editor@ijfmr.com

हिंदी साहित्य में उदारीकरण और किसान: 'फांस' उपन्यास के विशेष सन्दर्भ में

डॉ. गाजुला राजू[1], सविता वर्मा[2]

[1]सहायक प्राध्यापक, हिंदी एवम् आधुनिक भारतीय भाषा विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय प्रयागराज
[2]शोध छात्रा, पी. एच. डी, हिंदी एवम् आधुनिक भारतीय भाषा विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज

शोध सार

कृषि भारतीय अर्थव्यवस्था की बुनियाद है, लेकिन हाल के वर्षों में किसानों द्वारा आत्महत्या की बढ़ती हुई घटनाओं ने खेती में व्याप्त जबरदस्त संकट की ओर सबका ध्यान केंद्रित किया है। खेती का संकट केवल भारत में ही नहीं अपितु अमेरिका और यूरोप जैसे देशों में भी व्याप्त है; वहां भी किसान आत्महत्या कर रहे हैं और तेजी से खेती छोड़ रहे हैं। किसानों का विस्थापन ग्रामीण क्षेत्रों से शहरी क्षेत्रों की ओर हो रहा है, जहां पर वे औद्योगिक कारखानों में संलग्न हो रहे हैं। अपने खेतों के स्वामी किसान अब बड़े -बड़े नगरों में मजदूर बन चुके हैं। स्वाभिमानी किसान से बेबस किसान और मजदूर बनने की प्रक्रिया में सत्ता और पूंजीवादी व्यवस्था की हिंसक उदारवादी आर्थिक नीतियां जिम्मेदार हैं। इस पूरी प्रक्रिया में किसानों द्वारा किए गए संघर्ष का जीवंत चित्रण संजीव ने अपने उपन्यास 'फांस' में किया है। यह शोध आलेख फांस उपन्यास में उदारवादी नीतियों का किसानों पर पड़ने वाले दुष्परिणामों का विश्लेषण करता है।

बीज शब्द - किसान, आत्महत्या, सरकारी नीतियां, कर्ज, पूंजीवादी व्यवस्था , निजी बहुराष्ट्रीय कंपनियां

प्रस्तावना

कृषि मानव सभ्यता के विकास में सर्वाधिक महत्वपूर्ण कारक रहा है। यह न केवल मनुष्य के बुनियादी जरूरत भोजन की आपूर्ति करता है बल्कि इसके माध्यम से रोजगार का सृजन भी होता है। भारत में कृषि जीविकोपार्जन, सभ्यता, संस्कृति और विरासत की बुनियाद है। यद्यपि कृषि का भारतीय अर्थव्यवस्था में योगदान लगभग 18 फीसदी है, किंतु पीरियाडिक लेबर फोर्स सर्वे के आंकड़ों के अनुसार- 2021-22 में कृषि क्षेत्र में कुल 45.5 प्रतिशत श्रमबल संलग्न है। यह आंकड़ा 2018-19 में 42.5 प्रतिशत था।[1] ये आंकड़े इस तथ्य को भी दर्शाते हैं कि कोरोना महामारी के दौरान जब बाजार लोगों को रोजगार उपलब्ध कराने में असफल रहा, तब लोग रोजगार हेतु कृषि की ओर मुड़े और लॉकडाउन समाप्ति के बाद भी तीन प्रतिशत लोग वापस बाजार की ओर रुख नहीं किए बल्कि कृषि क्षेत्र में ही भरोसा जताया। कृषि अर्थव्यवस्था का प्राथमिक क्षेत्र है, जिस पर अन्य क्षेत्र आश्रित है। यह क्षेत्र फॉरवर्ड और बैकवर्ड लिंकेज के माध्यम से रोजगार का सृजन करता है। पिछले कुछ वर्षों में देश के विभिन्न राज्यों से किसानों द्वारा लगातार आत्महत्या करने के आंकड़ों में वृध्दि ने इस तथ्य को बहुत ही मजबूती से दर्शाया है कि भारतीय कृषि क्षेत्र अभूतपूर्व संकट से गुजर रहा है। यह क्षेत्र लगातार सरकार की नीतियों में प्राथमिकता की उपेक्षा का शिकार हो रहा है।

किसानों द्वारा आत्महत्या की प्रवृत्ति 90 के दशक से शुरु हुई है; जिसके मूल में उदारीकरण, निजीकरण और भूमंडलीकरण से सम्बंधित नीतियां हैं। इन नीतियों के फलस्वरूप कृषि में लागत बढ़ती गई। आयात शुल्क में कटौती के कारण विदेशी उपज भारतीय किसानों के उपज की अपेक्षा बाजार में सस्ते दामों पर बिकता है। इसका प्रत्यक्ष प्रभाव किसानों की आय पर पड़ता है। महंगे हाइब्रिड बीज, रखरखाव के लिए महंगे कीटनाशक और

[1] द वायर, 6 मार्च 2023

रसायनिक ऊर्वरक, पैदावार में स्थिरता और कमी, फसल तैयार हो जानें के बाद बाजार की अस्थिरता ने किसानों को ऋण के फांस में धकेल दिया है। इस दुश्चक्र में फंसकर किसान लगातार आत्महत्या कर रहे हैं। उदारीकरण की नीतियों के लागू होने के बाद से अब तक लगभग साढ़े तीन लाख से अधिक किसान आत्महत्या कर चुके हैं।

उदारीकरण:

उदारीकरण एक प्रक्रिया है, जो मुख्य रुप से आर्थिक सुधारों से सम्बन्धित है। इसके अन्तर्गत अर्थव्यवस्था के क्षेत्र में सरकारी हस्तक्षेप पर नियंत्रण लगाया जाता है और बंद अर्थव्यवस्था के विकल्प के रुप में मुक्त अर्थव्यवस्था को अपनाया जाता है। इस नीति के तहत सरकारी नीतियां विदेशी निवेश हेतु शिथिल की जाती है। 1991में वित्तीय संकट से निपटने के लिए भारत सरकार ने विश्व बैंक के निर्देश पर संरचनात्मक समायोजन कार्यक्रम लागू किया। यह वास्तव में व्यापक स्तर पर किया गया आर्थिक सुधार था। इसके अंतर्गत लाइसेंसिंग प्रणाली को समाप्त कर व्यापार प्रतिबंध से संबंधित नीतियों को शिथिल किया गया, आयात और निर्यात संबंधित नीतियों में व्यापक परिवर्तन हुआ; जिसका प्रभाव सभी क्षेत्रों में पड़ा। कृषि क्षेत्र भी इससे अछूता नहीं रहा। उदारीकरण की इस प्रवृत्ति ने निजीकरण को प्रोत्साहन दिया तो भूमंडलीकरण ने सम्पूर्ण प्रक्रिया को तीव्र कर दिया।

'फांस' उपन्यास में उदारीकरण और किसान

संजीव जी के द्वारा लिखित उपन्यास 'फांस' का केंद्र बिंदु किसान हैं। यह महाराष्ट्र के सूखाग्रस्त क्षेत्र विदर्भ के किसानों की दास्तान है जो उदारवादी आक्रामक और हिंसक आर्थिक नीतियों के शिकार हैं। उपन्यास के पात्रों के द्वारा संवाद के माध्यम से लेखक ने उदारवादी और नव उदारवादी नीतियों का भारतीय कृषि और किसानों पर पड़ने वाले प्रभावों को गहनता से अभिव्यक्त किया है। उपन्यास के शुरुआत में ही एक किसान पेड़ से लटक कर फांसी लगा लेता है। पता लगाने पर यह जानकारी होती है कि उस किसान की दो-दो बार फसलें बर्बाद हो चुकी थीं और उसने कर्ज ले रखा था और कर्ज न चुका पाने के कारण आत्महत्या कर ली थी। शिबू की पत्नी शकुन कहती है कि " इस देश का किसान कर्ज में ही जन्म लेता है, कर्ज में ही जीता है, कर्ज में ही मर जाता है।" [2]यह वक्तव्य देश में किसानों के जीवन संघर्ष की सच्चाई को व्यक्त करता है। कृषि ऋण किसानों की सबसे बड़ी समस्याओं में से एक है। नाबार्ड के आंकड़े बताते हैं कि देश के किसानों पर लगभग 17 लाख करोड रुपए का कर्ज है जिसमें तमिलनाडु राज्य शीर्ष पर है। राष्ट्रीय प्रतिदर्श सर्वेक्षण के 77 वें चक्र के आंकड़ों के अनुसार, प्रत्येक कृषक परिवार के ऊपर औसतन ₹74100 का कृषि ऋण है; जिसमें समय के साथ लगातार वृद्धि हो रही है। आंध्र प्रदेश और तेलंगाना जैसे राज्यों में प्रत्येक 10 में से 9 कृषक परिवार कर्ज के बोझ तले दबा हुआ है।[3] नीति निर्धारकों को यह ध्यान देने की जरुरत है कि किसान कर्ज तभी लेते हैं जब खेती से उनकी आमदनी बंद हो जाती है। परिवार का पालन-पोषण, बच्चों की शिक्षा, स्वास्थ्य एवम विवाह हेतु एक किसान कर्ज इस आशा के साथ लेता है कि अगली फसल बेचकर वह सारा क़र्ज़ चुका देगा; वास्तव में ऐसा होता नहीं है और आजीवन कर्ज में ही जीवन व्यतीत करता है। इसलिए सरकार को कृषि ऋण बांटने से ज्यादा किसानों की आमदनी कैसे बढ़े; इस पर ध्यान देने की जरुरत है।

एक किसान अपने परिवार के पालन पोषण के लिए खेती को ही सर्वोत्तम और बुनियादी जरिया मानता है। किंतु, जब खेती के माध्यम से भी वह अपने परिवार का पालन पोषण करने में और असक्षम हो जाता है और खेती को छोड़कर कोई अन्य विकल्प तलाश करने की सोचता है तो वह चाहकर भी परिस्थितिवश खेती को नहीं छोड़ पाता है। इसमें एक ऐसा ही दृष्टांत आया है जब शिबू आमदनी के लिए बड़े-बड़े शहरों में जाने के बारे में सोचते हुए कहता है कि "अगर वह अकेला होता तो नासिक, नागपुर, मुंबई और दिल्ली जैसे शहरों में चला भी जाता लेकिन वह अपने पत्नी और दोनों लड़कियों को लेकर कहां जाए।" शिबू की छोटी लड़की कलावती कहती है कि "बापू तुम ही नहीं इस देश के प्रत्येक 100 में से 40 किसान तुरंत खेती छोड़ दें यदि उनके पास आमदनी के लिए कोई वैकल्पिक स्रोत हो और लाखों किसानों ने तो खेती छोड़ भी दी है। लेकिन ज्यादातर किसान खेती नहीं छोड़ पाते क्योंकि खेती एक जीवन जीने का तरीका है जो किसी अन्य धंधे के लिए नहीं छोड़ा जा सकता। इसलिए, बाबा तुम

[2] फांस(2016)- संजीव, पृष्ठ संख्या- 15

[3] डाउन टू अर्थ, 11सितम्बर,2021

कितना भी कहो कि खेती छोड़ दोगे लेकिन तुम खेती नहीं छोड़ सकते। खेती तुम्हारे खून में है।[4] यह वक्तव्य किसानों का खेती के प्रति स्वाभाविक लगाव को दर्शाता है। खेती से जीवनयापन हेतु आमदनी प्राप्त करना किसानों के समक्ष एक प्रमुख चुनौती बनकर उभरा है। आय हेतु वैकल्पिक स्रोत तलाशने के लिए ग्रामीण क्षेत्रों से बड़े-बड़े महानगरों की ओर किसान विस्थापित भी हो रहे है। कृषि क्षेत्र की अर्थव्यवस्था में घटती हिस्सेदारी भी इसी तथ्य की ओर संकेत कर रही है कि किसानों का अब खेती से मोह भंग हो रहा है और आय हेतु वे महानगरों की ओर प्रस्थान कर रहें हैं।

महाराष्ट्र, आंध्र प्रदेश जैसे राज्यों के किसान कपास की खेती व्यापक पैमाने पर करते हैं और ज्यादातर आत्महत्याएं कपास उत्पादक क्षेत्रों में ही होती हैं। यह उपन्यास बी.टी काटन के बीज का किसान आत्महत्या से जुड़ाव को भी उजागर करता है। मोहन एक अन्य पात्र नाना बापट राव शंकर राव से कहता है कि “2002 में कपास का नया बीज बी.टी काटन विलायत देश अमेरिका से आया था। बीज के रखरखाव के लिए खाद और कीटनाशक की भी जरूरत होगी लेकिन किसानों के पास इन सब के लिए पैसे नहीं है; फिर कर्ज सरकार देगी लेकिन सिंचाई के लिए फिर भी वर्षा पर ही आश्रित होना पड़ेगा।” उस वर्ष कपास की फसल बहुत अच्छी हुई,परंतु दूसरी बार मौसम की अनिश्चितता से किसानों को जबरदस्त झटका लगा। अगली फसल की बुवाई के लिए फिर से वही प्रक्रिया महंगे बीज, कीटनाशक, खाद और इसके लिए कर्ज की पुनरावृत्ति ने किसानों को कर्ज के जाल में धकेल दिया। किसी तरह बची हुई फसल को बाजार में बेचने पर फसल का उचित मूल्य भी नहीं मिलता है और नाप तौल में गड़बड़ियां भी की जाती है। इसका दुष्परिणाम किसानों को ही भुगतना पड़ता है। इतने कड़वे अनुभव के साथ किसान जीवन यापन करता है और खेती, किसानी को बचाने के लिए अपने नेताओं को ढूंढता है। किसानों के पास आंदोलन के लिए विश्वसनीय नेताओं का अभाव है। जब किसान बी.टी काटन के विरुद्ध शरद जोशी के नेतृत्व में आंदोलन करते हैं तो सरकार के द्वारा किसानों के लिए बीज, खाद, ऋण और मुआवजे हेतु एक टास्क फोर्स का गठन किया जाता है; जिसका अध्यक्ष शरद जोशी को ही बना दिया जाता है और किसानों का आंदोलन नेतृत्व विहीन हो जाता है।[5] दरअसल ऐसी घटना यह दर्शाने के लिए पर्याप्त है कि किसान आंदोलनों को दबाने के लिए पूंजीवादी व्यवस्था और सरकारों के मध्य सांठ-गांठ रहती है। पूंजीवादी व्यवस्था और सत्ता कभी नहीं चाहती हैं कि उनके विरुद्ध किसी भी प्रकार का आंदोलन हो। अगर आंदोलन हो भी गया हो तो इन शोषणकारी व्यवस्थाओं की यह कोशिश रहती है कि आंदोलन को किसी भी प्रकार से समाप्त किया जाए। इसके लिए सबसे अच्छा उपाय होता है आन्दोलन के नेता को ही आंदोलन से अलग कर देना और ऐसा ही महाराष्ट्र के किसान आंदोलन के साथ हुआ था। आमतौर पर किसी आन्दोलन का नेतृत्व अगर एक व्यक्ति के हाथों में केंद्रित हो तब उस आन्दोलन के भटकाव की संभावना ज्यादा रहती है; हालांकि महेंद्र टिकैत के नेतृत्व में उत्तर प्रदेश के किसानों द्वारा आंदोलन इसका अपवाद है। शरद जोशी का किसान आन्दोलन से अलग होना और उसके बाद महाराष्ट्र में किसान आंदोलन का कमजोर होना पूंजीवादी षड्यंत्र का ही एक हिस्सा था।

किसान अपने परिवार का पालन पोषण, बेटी की शादी, बेटों की शिक्षा के लिए अपने खेत तक भी बेच देता है। मोहन 5 एकड़ जमीन का काश्तकार है। लेकिन खेती में आमदनी नहीं होने के कारण अपने बेटों को अच्छी शिक्षा नहीं दे पाता है, यही कारण है कि बेटों की अच्छी शिक्षा के लिए उसे अपने खेतों को बेचने के लिए बाध्य होना पड़ता है। मोहन अपनी बेटी विद्या का विवाह किसी किसान से नहीं बल्कि मजदूर से करता है। इतना सब करने के बावजूद भी मोहन के लड़के मोहन को ताना मारते हैं क्योंकि नौकरी के लिए अब मोहन बचे हुए खेतों को बेचकर घूस नहीं देना चाहता। उसके दोनों बेटे घर छोड़कर चले गए। मोहन की पत्नी सिंधुताई कहती हैं कि “खेत बेचकर के लड़कों को पढ़ाया अब खेत बेचकर घूस दो। नौकरी लगेगी या नहीं लगेगी, इसकी कोई गारंटी नहीं है। पढ़े-लिखे लड़के खेती को अपमान समझते हैं। खेत से गए, बेटों से गए, आमदनी से गए, उम्र से गए और ऊपर से खेती के लिए लिया गया कर्ज सर पर है।”[6] सिंधुताई का यह कथन इस तथ्य को दर्शाने के लिए पर्याप्त है कि किसान आत्महत्या क्यों करते हैं। किसानों द्वारा आत्महत्या करने के पश्चात मुआवजे के लिए वर्षों यही साबित करने में व्यतीत हो जाते हैं कि आत्महत्या करने वाला पात्र है या अपात्र।

[4] फांस(2016)- संजीव, पृष्ठ संख्या. 17-18

[5] पूर्वोधृत, पृष्ठ संख्या- 37-38

[6] पूर्वोधृत, पृष्ठ संख्या- 38-39

शिबू बैंक के 25000 रुपए के कर्ज को चुकाने के लिए वर्षों से जुटाए हुए रुपए इकट्ठा कर बैंक जाता है, जहां बैंक का क्लर्क उसे बताता है कि उसे ब्याज सहित कुल 29960 रूपए बैंक को चुकाने हैं। शिबू शेष रूपए इकट्ठा करने के लिए अपनी पत्नी शकुन के पास जाता है तो वह अपने एकमात्र आभूषण हंसुली को गले से निकालकर दे देती है। ये घटनाएं और दोनों बेटियों के विवाह की चिंता उसे स्वाभिमान से जीने नहीं देती है; अंत में शिबू भी आत्महत्या कर लेता है ।[7]

वास्तव में किसानों द्वारा आत्महत्या से पहले व्यवस्था के द्वारा कई बार किसानों की हत्या की जाती है जिसमें पूंजीवादी व्यवस्था सत्ता की सहयोगी होती है। लेखक इसकी वास्तविकता को उजागर करते हैं जैसे - 2002 में मोनसेंटो कंपनी के द्वारा बी.टी काटन को भारतीय बाजार में बिक्री के लिए लाया गया था। विदर्भ के किसानों द्वारा व्यापक पैमाने पर बी. टी कॉटन की खेती की गई। जिसका बहुत ही प्रतिकूल प्रभाव पड़ा। 2006 में विदर्भ के कुल 20 लाख किसानों में से 16 लाख किसान बैंक डिफाल्टर घोषित कर दिए गए। 1 लाख किसान गंभीर बीमारी के शिकार हो गए। बी. टी. कॉटन खेतों से उर्वरता को ही खत्म कर देती है। इसके लिए सामान्य से 15% ज्यादा उर्वरकों की जरूरत पड़ती है, और उर्वरक भी महंगे होते हैं। अत्यधिक सिंचाई और महंगे कीटनाशकों का उपयोग किसानों को आर्थिक रूप से अपंग बना देता है। ट्रांसजेनिक बीजों के उपयोग से मिलीबग नाम का नया कीड़ा उत्पन्न हुआ जो कि अत्यधिक जहरीले कीटनाशकों से भी नहीं मरते थे। ऐसे में एक तरफ किसान नुकसान झेलते है तो वही दूसरी ओर बहुराष्ट्रीय कंपनियां अत्यधिक महंगे बीज और जहरीले कीटनाशकों को बेचकर जबरदस्त मुनाफा कमाती हैं।[8] उदारीकरण के पश्चात् लगातार बीज उत्पादन, रसायनिक उर्वरकों और कीटनाशकों के उत्पादन में सरकार के हिस्सेदारी में कमी आई है और निजी क्षेत्रों का धीरे-धीरे वर्चस्व बढ़ता गया। मोनसेंटो, सिजेंटा, कोरगिल जैसी बहुराष्ट्रीय कम्पनियों का बीज उद्योग और रसायनिक कीटनाशकों के क्षेत्र में आधिपत्य स्थापित हो चुका है, इस कारण ये निजी कंपनियां किसानों से मनमानी दाम वसूलती हैं।

दरअसल उदारीकरण की नीतियों के कारण बहुराष्ट्रीय कंपनियों को भारतीय बाजारों में बीज और कीटनाशकों को बेचने के लिए सरकार की तरफ से छूट मिली। इन निजी कम्पनियों द्वारा बीजों के नए किस्मों को भारतीय बाजार में लाया गया और इससे अत्यधिक उत्पादन होने का दावा किया गया। इन दावों के कारण किसानों द्वारा पहली दफा तो कर्ज लेकर हाइब्रिड और ट्रांसजेनिक बीजों को खरीदकर बुवाई की गई, लेकिन अगली फसल प्रतिकूल मौसम और परिस्थितियों के कारण नष्ट हो गई। किसानों को हुए नुकसान की भरपाई के लिए सरकारी मदद भी 'ऊंट के मुंह में जीरा' के समान साबित हुई। जो फसलें प्रतिकूल परिस्थितियों को झेल कर बच गईं उनका भी उचित मूल्य बाजार में नहीं मिलने से किसान संपूर्ण रूप से कर्ज के 'फांस' में फंस जाते हैं। बहुराष्ट्रीय कम्पनियों पर बीज के लिए निर्भरता से किसानों का देशी बीजों से जुड़ाव भी खत्म हो गया। बी.टी काटन के आने से पूर्व देशी बीज सस्ते दामों पर मात्र 7 रूपए प्रति किलो की दर पर उपलब्ध था; वहीं बी.टी. काटन का दाम 930 रूपए प्रति किलो था, जो 2011 में 2700 रूपए प्रति किलो की दर पर बहुराष्ट्रीय कंपनी द्वारा बेचा गया। मोनसेंटो कंपनी को कुल 1600 करोड़ रूपए मिले।[9]

माहिको-मोनसेंटो कंपनी के द्वारा व्यापक स्तर पर यह प्रचारित किया गया कि बी. टी कॉटन की बोलगार्ड किस्म से कपास उगाने वाले भारतीय किसानों की आय में जबरदस्त वृद्धि हुई है। 2011 में यह आंकड़ा 31500 करोड़ रूपए तक पहुंच गया। यह भ्रामक और झूठी खबर बिके हुए पत्रकारों, फिल्मकारों और नेताओं के द्वारा फैलाई गई। किसानों के साथ छल और धोखा हुआ। जमीनी हकीकत यह रही कि 1995 से 2010 तक पूरे देश में आत्महत्या करने वाले किसानों की संख्या कुल 2,56,910 हो गई। पूंजीवादी षड्यंत्रों को किसानों के मुद्दों पर केंद्रित कार्यक्रम मंथन में उजागर करते हुए वेंकटैया कहते हैं कि "नकदी फसल पूंजीवाद साम्राज्यवादी शक्तियों का फैलाया हुआ लोग का जहर है और कपास सबसे बड़ी

[7] उपरोक्त, पृष्ठ संख्या - 63
[8] पूर्वोधृत, पृष्ठ संख्या-189-190
[9] पूर्वोधृत, पृष्ठ संख्या- 190

नकदी फसल है। देश में सुनामी, गुजरात के दंगे, उत्तराखंड में 2013 की प्राकृतिक आपदा में मरने वालों की संख्या को जोड़ भी दे तब भी 2012 तक 284649 आत्महत्या करने वाले किसानों में से 68 फीसदी किसान कपास उत्पादक है।"[10]

महाराष्ट्र में किसानों की आत्महत्या करने की घटनाएं अत्यधिक चिंताजनक है। यवतमाल में एक ऐसा भी गांव है जहां पर 22 कृषक विधवाएं हैं। कुछ सांसदों की तरफ से दीपावली के समय इन्हें साड़ी और 500 रूपए का नोट दिया गया। लेकिन कुछ ने कहा कि उन्हें साड़ी नहीं मिली और कुछ कहतीं हैं कि हमें तो पात्र ही नहीं समझा गया। लेकिन ये आवाजें गुम हो जाती हैं। दरअसल किसानों की समस्याओं को केंद्र में रखकर ही नीतियां निर्धारित करने की जरुरत है, लेकिन सरकार केवल पैकेज देकर छुटकारा पा लेना चाहती है। मंथन की चर्चा में यह वाक्य कहा जाता है- "सरकारी कर्मचारियों को पालिसी मिलती है, हमें पैकेज। किसानों को पैकेज नहीं पॉलिसी चाहिए।" सरकार द्वारा दिए गए पैकेज बहुत बड़े भ्रष्टाचार की भेंट चढ़ जाते हैं। प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह ने किसानों की आत्महत्या को ध्यान में रखते हुए एक पैकेज की घोषणा की, जो 3 राज्यों के लिए था। इसमें से 45% पैकेज उत्तर प्रदेश के लिए और शेष 55% महाराष्ट्र और आंध्र प्रदेश के लिए था, लेकिन महाराष्ट्र में आत्महत्या करने वाले किसानों को इससे लाभ ही नहीं हुआ। इस पैकेज का पूरा लाभ पश्चिमी महाराष्ट्र को हुआ; जहां फूलों की खेती की जाती है। पश्चिमी महाराष्ट्र में नेताओं के ही सहकारी बैंक हैं जिसके माध्यम से वे पैकेज का लाभ फर्जी किसानों की सूची देकर उठाते हैं। कैग की एक रिपोर्ट के अनुसार - पैकेज की जो राशि महाराष्ट्र को दी गई और जिन किसानों के लिए थी उन तक ये राशि पहुंची ही नहीं। बैंकों द्वारा किसानों की जो सूची सौंपी गई थी वह फर्जी थी। बिना जांच किए पैकेज की राशि फर्जी किसानों के खाते में स्थानांतरित कर दी गई।[11]

भारत में किसानों को दी जाने वाली सब्सिडी पर पश्चिमी देशों के द्वारा लगातार आपत्ति की जाती है; जबकि पश्चिमी देशों द्वारा अपने यहां के किसानों को सर्वाधिक सब्सिडी दी जाती है और उसकी तुलना में भारत के किसानों को दी जाने वाली सब्सिडी अत्यधिक कम है। विजयेंद्र देश के जाने-माने खाद्य नीति के विश्लेषक देवेंद्र शर्मा की रिपोर्ट को मंथन कार्यक्रम में पढ़ता है। रिपोर्ट के अनुसार- अमेरिका में 91% कृषि आधारित परिवारों को घर चलाने के लिए आय के एक से अधिक स्रोतों का सहारा लेना पड़ता है; जबकि वहां खेती के लिए अगले आने वाले 10 वर्षों में 962 अरब डालर की सब्सिडी का प्रावधान है। यूरोप के सालाना बजट का 40% हिस्सा कृषि क्षेत्र को देने के बाद भी वहां प्रत्येक मिनट में एक किसान खेती छोड़ता है। अमेरिका और यूरोप में किसानों को दी जाने वाली सब्सिडी का 80% हिस्सा किसानों को प्रत्यक्ष ना देकर, खेती पर आधारित व्यवसायों को दिया जाता है जिसका प्रत्यक्ष लाभ किसानों को नहीं मिल पाता है। अमेरिका में खेती के लिए इतनी भारी मात्रा में सब्सिडी देने के बाद भी आम आबादी की तुलना में वहां के किसान ज्यादा आत्महत्या कर रहे हैं और ज्यादातर आत्महत्या सरकारी आंकड़ों में दर्ज ही नहीं होती है। चीन में आत्महत्या करने वाले 280000 ग्रामीणों में 80% लोग भूमि अधिग्रहण के कारण आत्महत्या करते हैं। भारत में भी 1995 के बाद से अब तक लगभग 3.50 लाख से अधिक किसान आत्महत्या कर चुके हैं और ज्यादातर मामले तो दर्ज ही नहीं हुए हैं।[12]

निष्कर्ष

कृषि क्षेत्र में अभूतपूर्व संकट व्यवस्थाओं की देन है, जिसमें सत्ता और पूंजीवादी व्यवस्था दोनों सम्मिलित हैं। विकसित देश एक नवीन वैश्विक आर्थिक अर्थव्यवस्था बनाना चाहते हैं जिस पर उनका पूर्ण रूप से नियंत्रण हो। सरकारी नीतियों में उद्योगों को प्राथमिकता और कृषि क्षेत्र को नजरंदाज करना इस षड्यंत्र का ही एक हिस्सा है। सस्ता श्रम बल किसी भी उद्योग धंधे की सफलता के लिए सबसे बड़ी जरूरत है और सस्ता श्रम तभी उपलब्ध हो सकता है जब किसान खेती करना छोड़ें और शहरों की ओर विस्थापित हों। एक किसान अपने परिवार का पालन पोषण, बच्चों की शिक्षा, विवाह के लिए आमदनी खेती के माध्यम से ही कर लेगा तो वह कभी भी खेती नहीं छोड़ेगा। ऐसी स्थिति में एक प्रक्रिया के तहत खेती को घाटे का सौदा बनाया जा रहा है और बीज, कीटनाशक और उर्वरकों पर निजी कंपनियों के नियंत्रण से इनके मूल्य में अत्यधिक वृद्धि ने फसल

[10] उपरोक्त, पृष्ठ संख्या-192-193
[11] पूर्वोधृत, पृष्ठ संख्या-195
[12] पूर्वोधृत, पृष्ठ संख्या 196

के उत्पादन लागत को बढ़ा दिया है तो वहीं दूसरी ओर सरकार की आयात और निर्यात नीति के कारण विदेशों से आयातित उच्च सब्सिडी युक्त उपज का मुकाबला भारतीय किसानों के उच्च लागत वाले उपज नहीं कर पाते हैं, जिससे यहां के किसानों को बाध्य होकर सस्ते दामों पर अपनी फसल को व्यापारियों को बेचना पड़ता है। यह प्रक्रिया सतत चलती है और इस सतत प्रक्रिया के चक्रव्यूह में किसान कर्ज के जाल में फंस जाते हैं। ऐसा तिरस्कारपूर्ण जीवन जीने की अपेक्षा वे अपने जीवन को समाप्त करना ज्यादा बेहतर समझते हैं और आत्महत्या जैसे आत्मघाती कदम उठा लेते है। संजीव ने 'फांस' उपन्यास के माध्यम से पूंजीवादी षड्यंत्रों के कारण किसानों के संघर्षपूर्ण जीवन का चित्रण विभिन्न पात्रों के माध्यम से किया है। सरकार की नीतियों का वास्तव में व्यवहारिक स्तर पर किसानों को लाभ नहीं मिलता है। ऐसे स्थिति में सरकारों की यह नैतिक जिम्मेदारी है कि किसानों को केंद्र में रखकर ही नीतियों का निर्धारण और उनका क्रियान्वयन करें जिससे देश में तीव्र दर से बढ़ते हुए किसान आत्महत्या की घटना पर अंकुश लगे और किसान खुशहाल और गरिमा पूर्ण जीवन जी सकें।

सन्दर्भ

1. संजीव (2016). *फांस*. वाणी प्रकाशन. नई दिल्ली
2. शगुन (2021, 11 सितंबर). कर्ज में डूबा ग्रामीण भारत : 50 फीसदी से अधिक कृषि परिवारों पर कर्ज का भार. *डाउन टू अर्थ* https://www.downtoearth.org.in/hindistory/agriculture/farmers/indebted-india-debt-burden-on-more-than-50-percent-agricultural-households-78986
3. द वायर, 6 मार्च 2023. https://m.thewire.in/article/economy/share-of-agriculture-in-employment-rose-manufacturing-declined-in-2021-22-plfs/amp
4. इंडिया टुडे, 20 नवंबर 2021 https://www.indiatoday.in/diu/story/indian-agriculture-debt-data-msp-farmers-protest-1878975-2021-11-20